International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 5, May 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gage as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

पंचायती राज एवं महिला सशक्तिकरणः उत्तर प्रदेश राज्य के विशेष संदर्भ में

डॉ. संघ सेन सिंह*

जब तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होगा तब तक विश्व कल्याण नहीं हो सकता। किसी भी पक्षी का एक पंख से उड़ना संभव नहीं है। **–स्वामी विवेकानंद**

महिला सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण समकालीन विमर्श और आंदोलन है। इसके बहुत से महत्वपूर्ण आयामों में से एक, राजनीतिक आयाम है। वस्तुतः किसी भी समाज के किसी भी भाग की शक्ति का आकलन इस बात से किया जा सकता है, उनकी राजनीतिक निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया में कितनी सहभागिता है, क्योंकि राजनीतिक ही समाज में मूल्यों का आधिकारिक आवंटन करती है। यदि हम वस्तु स्थिति को देखें तो महिलाओं को राजनीतिक सत्ता प्रतिष्ठान में समुचित प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाया है। भारतीय संसद में अब तक महिलाओं का पतिनिधित्व 11 पतिशत से भी कम रहा है। संसद में महिलाओं को 1/3 पतिनिधित्व देने वाला विधेयक बार–बार प्रस्तुतीकरण की प्रक्रिया तक ही सीमित रह जाता है। सत्तर के दशक में भारत में नारीवादी आंदोलन, महिला विकास एवं महिला सशक्तिकरण की बात प्रमुखता से उभरी। यह महसूस किया गया कि जब तक राजनीतिक निर्णय निर्माण–प्रक्रिया में महिलाओं को समुचित भागीदारी सुनिश्चित नहीं हो जाती, तब तक महिला सशक्तिकरण संभव नहीं हो सकेगा। इस परिप्रेक्ष्य में भारतीय संविधान का 73वां संशोधन के द्वारा पंचायती राज की स्थापना उस महत्वपूर्ण छितिज का उद्घाटन करता है, जिससे एक तरफ तो तृण–मूल स्तर पर महिलाओं का राजनीतिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित होता है और दूसरी तरफ इससे लोकतंत्र का सुदृढ़ीकरण होता है। वस्तुतः महिला सशक्तिकरण का प्रश्न लोकतंत्र के सुदृढ़ीकरण से अविभाज्य रूप से जुड़ा हुआ है।

लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली इस बुनियादी धारण पर आधारित है कि सामान्य जनता का शासन के प्रत्येक स्तर पर प्रत्यक्ष और सजीव संपर्क स्थापित हो। इस दृष्टि से पंचायती राज भारत में स्थानीय मामलों के प्रशासन में लोकप्रिय भागीदारी की एक व्यवस्था है। ''पंचायती राज की योजना लोकतांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा शक्ति का अधिकाधिक विकेंद्रीकरण का प्रयत्न है। यह योजना जनता को अपने मामलों में प्रबंध करने की जिम्मेदारी देने की दिशा में साहसिक कदम है।'' इस दृष्टि से 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना, भारतीय लोकतंत्र की दोहरी उपलब्धि है। प्रथमतः इसके द्वारा सत्ता का विकेंद्रीकरण सुनिश्चित हुआ है, जो केंद्रीय कारण के विरूद्ध महत्वपूर्ण रक्षोपाय है। द्वितीयतः इससे देश की लगभग आधी आबादी, जो कि महिलाओं की है, को प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है, जिससे वंचित वर्गों को अधिकार देने संबंधी 'मौन क्रांन्ति' का सूत्रपात हुआ है। इससे भारत में लोकतांत्रिक चेतना तृण–मूल स्तर पर प्रकट हुई है। यदि ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो भारतीय राजनीतिक संस्कृति में लोकतांत्रिक मूल्यों का विशेष महत्व है। प्राचीन इतिहास के अनेक कालखंडों में लोकतान्त्रिक मूल्यों पर आधारित पंचायती राज

* एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग श्यामा प्रसाद मुख़र्जी राजकीय महाविद्यालय इलाहाबाद

व्यवस्था का स्पष्ट रूप विद्यमान रहा है। भारत की ग्रामीण जनता को प्राचीन काल में पंचायत द्वारा ही नियंत्रित रखा जाता था। लेकिन ब्रिटिश राज की स्थापना के बाद अंग्रेज शासकों ने लगान उगाहने के बेरहम प्रणाली के जरिए इस प्राचीन लोकतांत्रिक संस्था को प्रायः नष्ट कर दिया। किंतु लार्ड रिपन ने 1882 में स्थानीय स्तर पर विशिष्ट कार्यों की देखरेख के लिये चुनी गयी संस्थाओं की स्थापना हेतु नीति संबंधी पहल की। फलस्वरूप देश के विभिन्न भागों में ग्राम पंचायते, जिला बोर्ड, नगर निगम, नगर पालिका आदि अस्तित्व में आई।

20वीं सदी में गांधी जी ने पहली बार पंचायती राज संस्थाओं को लोकतंत्र का आधार मानकर; उन्हें पर्याप्त शक्तियां प्रदान कर पुनर्जीवित करने की इच्छा प्रकट की ताकि ग्रामवासियों को सही मायने में स्वराज मिल सके। गांधीजी की पहल पर ही भारत के संविधान में अनुच्छेद 40 शामिल किया गया। यहां उल्लेखनीय है कि संविधान के प्रथम प्रारूप इन संस्थाओं को शामिल नहीं किया गया था। इसमें उल्लेख है कि ''राज्य, ग्राम पंचायतों को सूदृढ़ बनाने और उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकार सौंपने के लिये कदम उठायेगा, जो उसके स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिये आवश्यक हो।'' यह अनुच्छेद यद्यपि संविधान के तहत राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों का एक भाग बना, लेकिन इसे कार्यान्वित करने के लिये तत्काल कोई कानून नहीं बनाया गया।

स्वतंत्रता के बाद इस दिशा में पहला प्रयास 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की शुरूआत रूप से किया गया। आगे चलकर 02 अक्टूबर, 1959 में राजस्थान के नागौर नामक स्थान से तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के द्वारा पंचायती राज संस्थाओं का उद्घाटन किया गया। इसके बाद विभिन्न राज्यों ने इस दिशा में कदम उठाये, किन्तु 73वें संविधान संशोधन के पूर्व तक ये संस्थाएं मृत प्राय सी बनी रही। 73वें संविधान संशोधन से इन संस्थाओं को पुनर्जीवन प्राप्त हुआ। साथ ही इसके द्वारा प्रत्येक वर्ग के लिये आरक्षित स्थानों में से एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिये आरक्षित किया गया। 73वें संविधान संशोधन के द्वारा राज्यों की भांति उत्तर प्रदेश राज्य ने भी अपने पंचायत विधि (संशोधन) अधिनियम 1994 द्वारा 'उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम 1947' तथा 'उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत राज अधिनियम 1961' में संशोधन कर लिया। जिसमें अन्य प्रावधानों के साथ महिलाओं के आरक्षण संबंधी व्यापक प्रावधान किये गये।

73वें संविधान संशोधन भारतीय राजनैतिक और संविधान विकास में उस महत्वपूर्ण बिन्दु का उद्घाटन करता है, जहां से भारतीय राजनैतिक व्यवस्था में एक नये युग की शुरूआत होती है। पहली बार महिलाओं के लिये इन संस्थाओं में एक तिहाई आरक्षण का प्रावधान सदस्य और अध्यक्ष दोनों पदों पर किया गया। इस तहर से भारतीय राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्था में एक 'मौन क्रान्ति' का सूत्रपात हुआ है। यदि हम इतिहास का अवलोकन करें तो भारतीय समाज की आरंभिक संरचना में स्त्रियों की भूमिका अपेक्षाकृत बराबर की दिखाई देती है, किंतु कालांतर में जटिल होती समाज की आरंभिक संरचना में स्त्रियों की भूमिका अपेक्षाकृत बराबर की दिखाई देती है। इस बात की ओर संकेत ए.एस. अल्तेकर ने भी किया है। परंतु स्त्रियों की स्थिति में यह गिरावट स्वतंत्रता आन्दोलन के पूर्व तक बनी रही, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान गांधी जी के नेतृत्व में महिलाओं ने पुरूषों के समान भाग लिया। परंतु राजनीति में उनकी भागीदारी अत्यल्प रही। सर्वप्रथम 1919 में बने भारत शासन अधिनियम में उन्हें मतदान का अधिकार मिला। भारत शासन अधिनियम 1935 में उन्हें राज्य परिषद् और विधान सभा में आरक्षण मिला, परंतु 1939 में नेहरू और सुभाषचन्द्रबोस की अध्यक्षता में बनी राष्ट्रीय नियोजन समिति की उपसमिति ने महिला नियतांश के विकल्प को समानता की रक्षा के नाम पर अस्वीकार करके महिलाओं के प्रतिनिधित्व के प्रश्न को अप्रासंगिक कर दिया। आजादी के पश्चात् भारतीय संविधान में लैंगिक विभेदों के अस्वीकार करते हुए स्त्री–पुरूष समानता को मौलिक अधिकारों में सम्मिलित किया गया। भारतीय संविधान की यह घोषणा निःसंदेह सहस्त्रों वर्षों से चले आ रहे सामंतवादी व्यवस्था व सामाजिक जीवन के अध्याय को समाप्त करती है। परंतु वास्तविक व्यवहार में सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं आया। 1953 में पिछड़ा वर्ग आयोग के अध्यक्ष काका कालेलकर ने महिला आरक्षण को लेकर अपनी विवशता व्यक्त की क्योंकि

उनका कहना था कि चूंकि महिलाएं पृथक समुदाय नहीं हैं इसलिये उन्हें पिछड़े वर्गों में शामिल नही किया जा सकता, परंतु सामाजिक पुनरूत्थान में महिलाओं की भूमिका को देखते हुए हम इनकी समस्याओं की उपेक्षा करने के इच्छुक नहीं है। 1947 में भारत सरकार द्वारा गठित समिति ने अपनी रिपोर्ट 'समानता की ओर' में लगभग इसी प्रकार के तर्कों के आधार पर महिला आरक्षण का पक्ष लेते हुए भी यह अफसोस जाहिर किया कि महिलाओं के हितों को आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक हित समूहों से पृथक नहीं किया जा सकता। इस प्रकार राजनीति में महिला सहभागिता का प्रश्न गौण ही बना रहा।

प्रजातंत्र केवल नस्लों, राष्ट्रों एवं वर्गों के मध्य ही न्याय एवं समानता की अपेक्षा नहीं करता बल्कि मानव जाति के दो सर्वाधिक मूल विभाजनों 'स्त्री–पुरूष' के मध्य समानता की अपेक्षा करता है। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु आरक्षण व्यवस्था केवल नारीवाद स्वप्नों को ही साकार नहीं करता अपितु संपूर्ण समाज की उन्नति एवं लोकतंत्र के सशक्तिकरण के लिये भी यह आवश्यक है।''आरक्षण का कानून बना देने मात्र से ही यह सामाजिक जीवन में स्वीकृत भले ही नहीं होता हो किंतु एक प्रक्रिया का आरंभ अवश्य कर देता है, जो अंततः सामाजीकरण की ओर ले जाती है। इस दृष्टि से 73वां संविधान तृण–मूल स्तर पर राजनीति में महिलाओं की भागीदारी का एक नया अध्याय आरंभ करता है, जो महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय उपलब्ध करायेगा और लोकतंत्र को सुदृढ़ बनायेगा।

उत्तर प्रदेश सरकार ने 73वें संविधान संशोधन के प्रावधानों के अनुरूप महिलाओं एवं अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा पिछड़ी जातियों के लिये इन संस्थाओं में व्यापक आरक्षण की व्यवस्था की है। अब तक उत्तर प्रदेश राज्य में नये प्रावधानों के अनुरूप तीन आम निर्वाचन हो चुके हैं। इन निर्वाचनों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व न्यूनतम निर्धारित 1/3 कोटे से अधिक रहा है। उदाहरण के लिये यहां सन् 2000, 2005 में हुये आम निर्वाचन के आधारभूत आंकड़ों को तालिका बद्ध के रूप में निम्नवत व्यक्त किया गया। इन आंकड़ों में पंचायत के तीनों स्तरों–ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत के अध्यक्षों के पदों पर महिलाओं की भागीदारी को स्पष्ट किया गया है। वर्ष 2000 के पंचायतों के आम निर्वाचन के आंकड़ों के वर्गीय स्थिति के अनुसार तालिका के रूप में निम्नवत व्यक्त किया गया है। ये आंकड़े निर्वाचन आयोग, उत्तर प्रदेश लखनऊ से प्राप्त हुय हैं।

क्र.	पद का नाम	श्रेणी	आरक्षित श्रेणी प्रतिशत में		
			महिला	पुरूष	योग
1	प्रधान, ग्राम पंचायत	अ.ज.जा.	0.02	0.04	0.06
		अनु. जा.	8.05	13.71	21.76
		आ.पि.व.	11.88	21.68	33.56
		सामान्य	15.37	29.25	44.62
		महायोग	35.32	64.68	100.00
2	प्रमुख क्षेत्र पंचायत	अ.ज.जा.	–	–	–
		अनु.जा.	9.89	10.01	19.90
		आ.पि.व.	12.73	15.58	28.31
		सामान्य	14.09	37.70	51.79
		महायोग	36.71	63.29	100.00
3	अध्यक्ष, जिला पंचायत	अ.ज.जा.	–	–	–
		अनु.जा.	13.04	7.25	20.29
		आ.पि.व.	15.94	15.94	31.88

		सामान्य	24.64	23.19	47.83
		महायोग	53.62	46.38	100.00

उपरोक्त तालिका वर्ष 2000 के पंचायतों के अध्यक्ष पदों पर निर्वाचित व्यक्तियों से संबंधित है। प्रधान, ग्राम पंचायत के पदों पर 35.32 प्रतिशत महिलाएं निर्वाचित हुई। प्रमुख, क्षेत्र पंचायत के पदों पर कुल 36.71 प्रतिशत महिलाएं निर्वाचित हुई। अध्यक्ष, जिला पंचायत के पदों पर निर्वाचित हुई। अध्यक्ष, जिला पंचायत के पदों पर निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत 53.62 रहा। इस प्रकार स्पष्ट है कि त्रिस्तरीय पंचायतों के निर्वाचन में ग्रामीण महिलाओं ने सक्रिय भागीदारी निभाई और निर्धारित आरक्षण प्रतिशत से अधिक संख्या में निर्वाचित होकर पंचायत के विभिन्न पदों/स्थानों पर पदारूढ़ हो गईं। इस दृष्टि से त्रिस्तरीय पंचायत निर्वाचन, भारतीय परिदृश्य में जहां अभी महिलाओं की संख्या अतिन्यून है, से अलग हटकर एक नई संभावना को जन्म देते हैं, जो संभवतः आगे आने वाले काल में भारतीय राजनीति में विशेष परिवर्तन के दिशा वाहक सिद्ध होंगे।

वर्ष 2005 में उत्तर प्रदेश राज्य में हुए त्रिस्तरीय पंचायत राज के आम निर्वाचन मतों महिलाओं और पुरूषों का प्रतिशत निम्नवत् हैं। ये आंकड़ें निर्वाचन आयोग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ से प्राप्त हुए हैं–

पद	महिला संख्या/प्रतिशत	पुरूष संख्या/प्रतिशत	कुल योग
अध्यक्ष, जिला पंचायत	53/75.71	17/24.29	70
प्रमुख, क्षेत्र पंचायत	414/50.73	402/49.27	816
प्रधान, ग्राम पंचायत	26069/50.15	25907/49.85	51976

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जिला पंचायत स्तर पर कुल पदों की संख्या 70 है। इनमें से 53 पदों पर महिलाओं निर्वाचित हुई हैं, जिनका प्रतिशत 75.71 है। क्षेत्र पंचायत प्रमुख के कुल 816 पद है, जिनमें से 414 पदों पर महिलाएं निर्वाचित हुई हैं, शेष 402 पदों पर पुरूष निर्वाचित हुए हैं। निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत 50.73 है। ग्राम पंचायत प्रधान के स्तर पर कुल निर्वाचित प्रधान पदों की संख्या 51976 है। निर्वाचित महिला प्रधानों की संख्या 26060 है तथा पुरूषों की संख्या 25907 है। इस स्तर पर निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत 50.15 है।

यदि हम उपरोक्त आंकड़ों का विश्लेषण करें तो उत्तर प्रदेश राज्य की पंचायती राज व्यवस्था के तीन सामान्य निर्वाचन 1995, 2000 एवं 2005 महिला सहभागिता की प्रगति का सकारात्मक चित्र प्रस्तुत करते हैं। जहां 1995 के निर्वाचन में किसी तरह से एक तिहाई नेतृत्व हो पाया था। उसी समय इन पर 'पति पंचायत', 'मुखिया विहीन पंचायत' एवं ऐसे ही अन्य नामों की छाप लग गई। वर्ष 200 के पंचायत चुनाव में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में महत्वपूर्ण सुधार हुआ और वे एक तिहाई की सीमा पार कर गई। वर्ष 2005 के पंचायत निर्वाचन में महिलाओं ने तीनों स्तरों पर 50 प्रतिशत से अधिक स्थान जीते। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि पंचायतों के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की भागीदारी बहुत तीव्र गति से बढ़ी है। साथ ही हम यह भी कह सकते हैं कि पंचायतों में महिलाओं की सह भागिता स्वतःस्फूर्त हो चुकी है। यह संविधान संशोधन की भावना के अनुरूप है। यह भारतीय सामाजिक–राजनीतिक जीवन का एक नवीन तथ्य है, जिससे मुंह नहीं मोड़ा जा सकता, आवश्यक है इसे सही दिशा देने की। इस प्रकार उत्तर प्रदेश राज्य का पंचायती परिदृश्य महिला सशक्तिकरण एवं सहभागिता के उज्ज्वल भविष्य का निरूपण करता है। इतने व्यापक स्तर पर महिलाओं की भागीदारी भारतीय लोकतंत्र की सबल जीजिविषा का प्रतिबिंब प्रस्तुत करती है।

परंतु इन महिला जन प्रतिनिधियों के समक्ष समस्याएं भी कम नही हैं। देश के इतिहास में पहली बार महिलाओं के सशक्तिकरण का यह संगठित प्रयास शुरू है। राजनैतिक और सामाजिक ढांचे में परिवर्तन की उम्मीदें बंधी हैं। लेकिन इससे रातों रात कोई चमत्कार हो जायेगा, ऐसी आशा निराधार है। भारत जैसे जटिल देश में जहां अनेक धर्म, भाषाएं और जातीय समूह है; सत्ता में महिलाओं की समान भागीदारी के लिये सरकार और समाज के सामने खास चुनौती

सांस्कृति, संस्थागत और सामाजिक बंधनों को तोड़ना है, जो सदियों से अपनी जड़ें जमाए बैठे हैं। उत्तर प्रदेश में तो समस्या और भी गहरी है। सामंती व्यवस्था में पले बढ़े व्यक्ति विशेषकर ग्रामीण जन स्त्रियों के प्रति अपने रवैये में परितर्वन लाना नहीं चाहते है। यहां सामंती मूल्य संस्कार अब भी काफी दृढ़ हैं। यद्यपि 73वें संविधान संशोधन के बाद जल्द ही इस आशय की रिपोर्ट आने लगी कि पंचायतों का हाल ठीक नहीं है और स्त्रियों, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के जो प्रतिनिधि निर्वाचन होकर आये हैं; वे ऊंची जातियों के अत्याचार के शिकार हो रहे हैं। इन हिंसक घटनाओं की एक समाजशास्त्रीय तहकीकात का निष्कर्ष यह है कि ''पंचायत उस समाज का सूक्ष्म संस्करण होती है, गांव जिसका हिस्सा होता है। 73वें संशोधन में प्रतिपादित स्वशासन की संस्थाओं के उच्च आदर्शों को मौजूदा अन्याय पूर्ण समाज में यथार्थ रूप रूपांतरित नहीं किया जा सकता।'' लेकिन समय बदल रहा है, दृष्टिकोण भी बदल रहे हैं। इसमें संदेह नहीं कि सार्वजनिक जीवन और निर्णय लेने की प्रक्रिया में बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी ही समाज की दकियानूसी सोच में परिवर्तन लायेगी। यही नहीं समाज के भौतिक विकास के लिये महिलाएं नई तरह से प्राथमिकताएं तय करेंगी और उन्हें नये ढंग से लागू करेंगी।

वस्तुतः 73वें संविधान संशोधन को लागू हुये एक दशक से अधिक समय बीत गया है। पंचायती राज के माध्यम से गांव के स्तर पर एक 'मौन क्रान्ति' का सूत्रपात हो चुका है। सत्ता के जमीनी स्तर के प्रयोग में महिलाओं, दलितों एवं आदिवासियों को वांछित स्थान मिल गया है। लगभग सभी राज्यों में चुनाव नियमित अंतराल पर होने लगा है। पंचायतों में लोकसत्ता अपने को अभिव्यक्त भी कर रही है। उत्तर प्रदेश की पंचायतों की सफलता की कथाएं प्रदेश के कोने–कोने से सुनाई पड़ने लगी हैं। यद्यपि महिलाओं के समक्ष सामाजिक संरचना जन्य बाधाएं हैं, परन्तु वे समय के बीतने के साथ दूर होती जायेंगी। इस संदर्भ में दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व सम कुलपति एवं पंचायती राज विशेषज्ञ डी.के. गंगराडे का कहना है कि ''जहां तक पंचायत राज में महिलाओं की भागीदारी के दुरूपयोग का प्रश्न हैं, तो दुरूपयोग किसी भी चीज का हो सकता है, हो भी रहा है। अभी तक महिलाएं घरों में कैद रही हैं। उन्हें कम मौके मिले हैं। इसलिये शुरूआत में कुछ दुरूपयोग हो सकता है। लेकिन भविष्य की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कदम है। साक्षरता एवं जागरूकता बढ़ने के साथ महिलाएं सक्षम होती जायेंगी। फिलहाल इसका दुरूपयोग अधिक–से–अधिक यही हो सकता है कि सक्षम लोग अपने फायदे के लिये किसी कमजोर महिला को खड़ा कर दें। लेकिन यह ज्यादा दिन तक नहीं चलेगा। इसलिये दुरूपयोग का सवाल महत्वपूर्ण नहीं है। इस प्रकार 73वें संविधान संशोधन द्वारा भारत में स्थापित पंचायती राज व्यवस्था महिला सशक्तिकरण की दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम है।

संदर्भ–ग्रन्थ

1. डॉ. वी.पी. वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा–3, सन् 2000, पृ. 632
2. मैथ्यू जार्ज, भारत में पंचायती राज. परिप्रेक्ष्य और अनुभव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2003, पृ. 15
3. मैथ्यू जार्जः पूर्वोधृत
4. के.एम. पाणिक्कर, हिन्दू सोसाइटी एट द क्रास रोड्स एशिया पब्लिशिंग हाउस, बाम्बे, 1961, पृ. 171
5. ए.एस. अल्तेकर, वीमेंस हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1962, पृ. 171
6. रेवाल, स्टीफन तवा लामा; फ्लकुएटिंग लेजिटिमेसी ऑफ जेंडर ऐज ऐ पोलिटिकल कटेगरी, इकोनामिक एंड पोलिटिकल वीकली, खंड गगनअप, सं. 17, 28 अप्रैल, 2001, पृ. 1436
7. देसाई, नीरा; वूमन इन मार्डन इंडिया, वोरा एंड कंपनी पब्लिशर्स, मुम्बई, 1957, पृ. 287
8. पूर्वोधृत, स्टीफन तवा लामा रेवाल, पृ. 1436